माघ काव्य में नीतिगत सूक्तियॉ

डॉ0 नलिनी श्रीवास्तव
स्नातक शिक्षक, केन्द्रिय विद्यालय बरेली

सारांश

माघ मूलतः एक विदग्ध कवि थे इन विशेषताओं के साथ–साथ षब्दशास्त्र के उद्भट विद्वान् भी थे। माघ जैसी सर्वातिशायिनी प्रतिभा अन्य किसी कवि में नहीं देखी जाती, उनके पास जो अक्षय एवं अभिनव शब्द भण्डार है और उनके यथावत् प्रयोग के लिए उनके पास कलात्मक सज्जा एवं कल्पना का चातुर्य है, वह अन्यत्र न मिलेगा। यही कारण है कि उन्होंने अपने काव्य में सर्वत्र नये–नये शब्दों तथा सूक्तियों का बड़ी प्रचुरता के साथ प्रयोग किया है। उनका प्रत्येक श्लोक अभिनव है। शिशुपालवधम् महाकाव्य में उपलब्ध सूक्तियॉ मानव जीवन की समस्याओं का समाधान ढूंढने में अत्यन्त सहयोगी हैं

1– श्रेयसि केन तृप्यते।

2– शुभेतराचारविपक्त्रिमापदो निपातनीया हि सतामसाधवः।

3– परिभवोऽरिभवो हि सुदुःसहः।

4– उत्तिष्ठमानस्तु परो नोपेक्ष्यः पथ्यमिच्छता।

5– तेजस्विमध्ये तेजस्वी दवीयानपि गण्यते।

आदि अनेक प्रेरणादायी सूक्तियों से माघकाव्य पूर्ण है जिसका विस्तार से वर्णन प्रस्तुत शोध–पत्र में किया गया है ।

महत्वपूर्ण शब्दः *महाकवि माघ, नीति, सूक्तियां*

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैः
डॉ0 नलिनी श्रीवास्तव, ''*माघ काव्य में नीतिगत सूक्तियॉ* ''
शोध मंथन,
सितम्बर 2017,
पेज सं0 44–53
http://anubooks.com/?page_id=581
Artcile No.8 (SM 446)

प्रस्तावना

महाकवि माघ एक प्रतिभाशाली कवि थे। उनकी प्रतिभा चतुर्मुखी थी। वे बहुश्रुत विद्वान् थे। उनका वैदुश्य एकांगी न होकर सर्वाङ्गीण था। वे व्याकरण के पण्डित थे। वाणी उनकी वशवर्तिनी थी। उनके काव्य में कला–कल्पना और प्रतिभा का उच्चकोटि का समन्वय है। वस्तुओं को देखने की उनकी सूक्ष्म दृष्टि तथा भावों की गम्भीरता अत्यन्त प्रशंसनीय है। उनके वर्णन में भावों का संकलन कल्पना की ऊँची उड़ान, भावों में अनुभूति का समन्वय तथा विचारों में चिन्तन का आधार प्राप्त होता है। महाकवि माघ द्वारा रचित शिशुपालवधम् महाकाव्य में भौतिक जीवन से सम्बन्धित उन सारे व्यवहारिक पक्षों का निर्दशन हुआ है। जिससे वर्तमान मानव जीवन की विविध समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने में सहयोग मिलता है। विशेषरूप से उनकी सूक्तियों में यह स्पष्ट तौर पर दृष्टिगोचर होता है।

श्रेयसि केन तृप्यते।।[1]

अर्थात् कल्याण के विशय में कौन सन्तुष्ट होता है? अर्थात् कोई नहीं है।

ऋते रवेः क्षालयितुं क्षमेत कः क्षपातमस्काण्डमलीमसं नभः।[2]

क्योंकि रात्रि के अन्धकार समूह से मलिन आकाष को धोने के लिए सूर्य के बिना कौन समर्थ होता है? अर्थात् कोई नहीं।

शुभेतराचारविपक्त्रिमापदो निपातनीया हि सतामसाधवः।।[3]

क्योंकि अशुभ आचरण से परिपक्व आपत्ति वाले असज्जन सज्जनों के वध्य होते हैं।

उत्तिष्ठमानस्तु परो नोपेक्ष्यः पथ्यमिच्छता।[4]

क्योंकि बढ़ने वाले रोग तथा शत्रु को शिष्टों अर्थात् राजनीतिज्ञ विद्वानों ने समान घातक कहा है। जिस प्रकार बढ़ते हुए रोग की उपेक्षा करने पर वह रोगी को मारने वाला हो जाता है, उसी प्रकार बढ़ते हुए शत्रु की उपेक्षा करने पर वह भी विपक्षी को पराजित करने वाला होता है, अतः शिशुपाल का वध करने में विलम्ब नहीं करना चाहिये।

ज्ञातसारोऽपि खल्वेकः सन्दिग्धे कार्यवस्तुनि। [5]

सारभूत तत्त्वको जानता हुआ भी एक व्यक्ति कर्त्तव्य कार्य में सन्देह युक्त रहता है। प्रस्तुत स्थान पर श्रीकृष्ण भगवान ने उद्धव तथा बलराम जी को अतिशय सामीप्यसूचक 'अ' शब्द से सम्बोधित कर उनकी बातों को सुनना तथा तदानुसार उचित कार्य करनें में ही अपनी सम्मति होना सूचित किया है।

विरराम महीयांसः प्रकृत्या मितभाषिणः।।[6]

बड़े लोग स्वभाव से थोड़ा बोलते है जो बोलते भी है उस विषय वस्तु के बारे में बढ़ा–चढ़ाकर नहीं बोलते है।

इन्धनौघधगप्यग्निस्त्विशा नात्येति पूषणम्।। [7]

इन्धन–राशि को जलाने वाली भी अग्नि तेज से सूर्य का उल्लंघन नहीं करती है।

अनिर्लोडितकार्यस्य वाग्यजालं वाग्मिनो वृथा।।[8]

कार्य का आलोडन नहीं करने वाले अर्थात् कर्तव्याकर्तव्य को नहीं जानने वाली वाग्मी अर्थात् बहुत बोलने वाले विद्वान्, वक्ता का वचन समूह, लक्ष्य–भ्रष्ट बाण वाले धनुर्धारी के उछलने–कूदने के समान व्यर्थ होता है।

तृप्तियोगः परेणति महिम्ना न महात्मनाम्।।[9]

समृद्धिमान् को दूसरे की हानि ही या न हो इससे क्या प्रयोजन है मन में आये हुए इस प्रश्न का खण्डन करते हुए बलराम जी कहते हैं–समृद्धि चाहने वाले बड़े लोगों को समृद्धि से भी तृप्ति नहीं होती, अर्थात् उससे भी उनकी प्यास नहीं बुझती।

तेजस्विमध्ये तेजस्वी दवीयानपि गण्यते।।[10]

अत्यन्त दूर रहने वाला भी तेजस्वी पुरूष तेजस्वियों में उस प्रकार गिना जाता है, जिस प्रकार पंचतपवाले तपस्वियों की पंचाग्नि में दूरस्थ होने पर भी सूर्य पाँचवी अग्नि होता है।

मुदुव्यवहितं तेजो भोक्तमर्थान् प्रकल्पते।।[11]

क्षमा युक्त तेज अर्थात् बल विषयों को भोगने के लिए वैसे समर्थ होता है, जैसे भीतर में स्थित बत्ती से दीपक तैलादि को ग्रहण कर लेता है।

बृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति।।[12]

इन कारणों से सहायक युक्त शिशुपाल को जीतना सरल नहीं है, क्योंकि बड़े–बड़े सहायकों वाला क्षुद्र व्यक्ति कार्य के अन्त तक वैसे ही पहुँच जाता है। जैसे पहाड़ी नदियाँ गंगा आदि महानदियों में मिलकर उनकी सहायता से समुद्र में पहुँच जाती है।

महात्मानोऽनुगृह्णन्ति भजमानान् रिपूनपि।।[13]

महात्मा लोग शरण में आये हुए शत्रुओं पर भी अनुग्रह करते है, जैसे गंगा आदि महा नदियाँ सपत्नीरूप पहाड़ी नदियों को पतिरूप समुद्र के पास पहुँचा देती है।

छन्दानुवृत्तिदुःसाध्याः सुहृदो विमनीकृताः।।[14]

विमानित मित्रों को उनके अनुकूल व्यवहार द्वारा कठिनाई से सन्तुष्ट किया जा सकता है।

अनेकषः संस्तुतमप्यनल्पा नवं नवं प्रीतिरहो करोति।।[15]

दोष रहित श्री कृष्ण को देखने के इच्छुक जन समूह प्रत्येक गलीयों से समीप में आयें अत्यधिक प्रेम अनेक बार परिचित को भी नवीन–नवीन बना देता है, हे आश्चर्य की बात है।

क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः।।[16]

बार–बार देखे गये भी उस रैवतक पर्वत ने अपूर्व के समान श्रीकृष्ण भगवान के आश्चर्य को बढ़ा दिया जो प्रतिक्षण नवीनता को धारण को करता है। वही रमणीयता का स्वरूप है।

सर्वः प्रियः खलु भवत्यनुरूपचेष्टः।। [17]

अपने अनुकूल चेष्टा वाले सभी प्रिय होते है। अतः एक को शीघ्र तथा दूसरे को धीरे–

धीरे चलने पर भी दोनों को समान रूप से देखना उचित था।

सर्वे हि नोपगतमप्यपचीयमानं वर्धिष्णु माश्रयमनागतमभ्युपैति।। [18]

सभी लोग घटते हुए उपस्थित आश्रय को भी नहीं प्राप्त करते है। किन्तु भविष्य अप्राप्त भी आश्रय को प्राप्त करते है।

नान्यस्य गन्धमपि मानभृतः सहन्ते।। [19]

मानी लोग दूसरे के अर्थात् शत्रु के गन्ध नामो–निशान को भी नहीं सहते है तो फिर उनके साथ रहने एवं विहारादि करने की क्या बात है।

नैवात्मनीनमथवा क्रियते मदान्धैः।। [20]

मद से अन्धे लोग अपने हित कर कार्य नही करते।

शास्त्रं हि निश्चितधियां क्व न सिद्धिमेति।।[21]

निश्चित बुद्धि वालो का अर्थात् भ्रम से रहित बुद्धि वालों का शास्त्र कहां पर सफल नही होता अर्थात् सर्वत्र सफल होता है।

मन्दोऽपि नाम न महानवगृह्य साध्यः।।[22]

मन्द जातिवाला हाथी भी बलवान् बलपूर्वक वश में नहीं किया जाता है। राजपुत्रीय शास्त्रों में लिखा है कि जो हाथी मारने से चमड़ा छूट जाने, रक्त निकल जाने तथा मांस बाहर हो जाने पर भी अपने को नहीं सभांलता उस मतवाले हाथी को गम्भीर वेदी हाथी कहते है। और मृगचर्मीय शास्त्रों मे लिखा है जो हाथी चिरपचित शिक्षा को भी बहुत विलम्ब से ग्रहण करता है, उस हाथी को गम्भीरवेदी कहतें है।

परिभवोऽरिभवो हि सुदुःसहः।।[23]

शत्रुओं के द्वारा पराजय अत्यन्त दुःसह होता है। अर्थात् सहने योग्य नही होता।

अभिराद्धुमादृतानां भवति महत्सु न निष्फलः प्रायसः।। [24]

इसके बाद वे भगवान कृष्ण रैवतक पर्वत पर ऋतुओं के द्वारा विस्तृत उपवनशोभा देखन के लिए निकल पड़े उनका यह कार्य उनके अनुरूप ही था क्योंकि सेवा करने के लिए महापुरूषों के विषय में श्रद्धालुओं का प्रयास निष्फल नहीं होता है।

स्फुटमभिभूषयति स्त्रियस्त्रपैव।।[25]

लज्जा ही स्त्री को अलंकृत करती है। चन्द्र मुख को नीचे की हुई पति व्यवधान को चाहती हुई सील इस अपनी प्रियतम के लिए अपने को प्रकाशित करती हुई जो स्थित हुई इस कारण से पति के चित्त को सहज ही हर लिया अर्थात् अपने वस में कर लिया।

किमिव न शक्तिहरं ससाध्वसानाम्।।[26]

भययुक्त लोगों के सामर्थ्य को नष्ट करने वाला कौन नहीं होता अर्थात् भययुक्त लोगों के सामर्थ्य को सभी कार्य अथवा व्यक्ति नष्ट कर देते है। यही कारण था कि मृदुप्रकृति अबला द्वारा पुष्प माला से बांधा गया भी समर्थ युवक एक पग भी चलनें मे समर्थ नहीं हुआ।

न परिचयो मलिनात्मनां प्रधानम्।।[27]

मलिन आत्मा वालों, दुश्ट चित्तवालों काले षरीर वालों के लिए परिचय प्रधान नहीं होता है। यही कारण था कि काले षरीर वाले भ्रमर समूह चिरपरिचित भी लताओं को छोड़कर जहाँ उनकी गन्धलाभरूपी स्वार्थ सिद्धि होती थी, वहाँ चले गये।

मृदुतरतनवोऽलसा प्रकृत्या चिरमपि ताः किमुत प्रयासभाजः।।[28]

अत्यन्त सुकुमार शरीर वाली स्त्रियॉ स्वभाव से ही आलसी होती हैं तब फिर बहुत देर तक परिश्रम करने पर वैसी आलसयुक्त हो गयी। इसमें कहना ही क्या है।

बुद्ध्वा वा जितमपरेण काममाविश्कुर्वीत स्वगुणमपत्रपः क एव।। [29]

दूसरे के द्वारा जीते गए अपने गुण को जानकर भी कौन निर्लज्ज व्यक्ति उसे प्रकट करता है अर्थात् उसे कोई भी प्रकट नहीं करता। हंस स्त्रियों ने धीरे–धीरे विलासपूर्वक जाती हुई उन कृषाङ्गियों को देखकर अपनी गति की अपेक्षा उन रमणियों की गति को उत्तम होने के कारण आष्चर्यित होती हुई गमन नहीं किया अर्थात् वहीं रूक गयी।

लब्धस्पर्शानां भवति कुतोऽथवा व्यवस्था।।[30]

प्रवेश पाये हुये पुरूषों की मर्यादा सुरक्षित नही रह सकती है। अतः नायिका के उठे हुये दोनों स्तनो पर नायक रूप पानी के तंरग रूप हाथों का पहुँच जाना स्वभाविक ही था। नभ्र वाली रमणी के नाभितक तड़ाग में प्रवेश करने पर चंचलता के कारण पानी के तरंग रूपी हाथ ऊँचे–ऊँचे पहुंच गये।

क्षुभ्यन्ति प्रसभमहो विनापि हेतोर्लीलाभिः किमु सति कारणे रमण्यः।।[31]

रमणी ने अत्यधिक विलास को प्राप्त किया अर्थात् अधिक विलासों को दिखलानें लगी। उसका ऐसा करना ठीक ही था, क्योंकि रमणियाँ कारण होने पर भी लीलाओं से अत्यन्त क्षुब्ध हो जाती है। तो फिर कारण के होने पर कहना ही क्या है। चंचल शहरी नामक मछली के द्वारा आहत या घायल किये गये अथवा काटे गये जंघाओं वाली डरती हुयी रमणी ने अत्यधिक विलास को प्राप्त किया।

आरूढ़ पतित इति स्वसम्भवोऽपि स्वच्छानां परिहरणीयतामुपैति।।[32]

उच्च स्थान पर चढ़ा हुआ अपने से उत्पन्न पुत्र आदि भी पतित होकर अर्थात् नीच कर्म करने से भ्रष्ट होकर निर्मल लोगों का त्याज्य होता है अर्थात् उत्तमाश्रय को पाकर पुनः नीच कर्म करने वाले आत्मज को भी दोषहीन सज्जन लोग छोड़ देते है, इसको स्मरणकर रमणियों के कानों से गिरे हुए अपने में उत्पन्न भी नीलकमल को पानी ने तरंगों से किनारे की ओर फेंक दिया।

शोभाये विपदि सदाश्रिता भवन्ति।।[33]

सज्जनों के आश्रय में रहने वाले विपत्ति में शोभा के लिए होते है। पानी में रमणियों के अलक्तक रहित अधर को दन्तक्षतों ने तथा कुङकुमादि लेपरहित शरीर को अभिनव नखक्षातों ने श्रीयुक्त कर दिया।

अवधीरितानामप्युच्चैर्भवति लघीयसां हि धाष्टर्यम्।।[34]

तिरस्कार पाये हुए भी क्षुद्र लोगों की धृष्टता अधिक ही रहती है। रमणियों के शरीर से गिरे हुए सोने के बने वजनदार हुए आभूषण मानों लज्जा से तत्काल पानी में डूब गये। लेकिन पुष्प मालाएं नाचने अर्थात् तैरने लगी।

अस्तसमयेऽपि सतामुचितं खलूच्चतरमेव पदम्।।[35]

अस्तमनरूप विपत्तिकाल में भी अस्ताचल के शिखरों पर ठहर गया क्योंकि विनाश के समय में भी बड़े लोगों का स्थान अत्यन्त ऊँचा ही रहना उचित होता है।

अपदोषतैव विगुणस्य गुणः।।[36]

गुणहीन का निर्दोश होना ही गुण होता है। जिसमें ताराएँ दिखलायी नहीं पड़ रही हैं चन्द्रमण्डल भी दिखलायी पड़ रहा है, सूर्य अस्त हो गया, गर्मी शान्त हो गई है और अन्धकार भी नहीं हुआ है, ऐसा उपरोक्त गुण युक्त आकाश शोभायमान हो रहा था।

द्युतिमग्रहीद्ग्रहगणो लघवः प्रकटीभवन्ति मलिनाश्रयतः।।[37]

छोटे लोग अर्थात् नीच स्वभाव वाले व्यक्ति मलीनों तुच्छाभिप्रायवालों अर्थात् पापियों के आश्रय से प्रकट होते है। जो तारा समूहदिन में सूर्य के प्रभा से दिखलायी भी नहीं दिया वह बहुत अन्धकार से व्याप्त रात्रि को प्राप्त कर चमकने लगा।

समये हि सर्वमुपकारि कष्तम्।।[38]

समय पर किया हुआ सब कार्य उपकार हुआ करता है। चन्द्रमा के उदय होने पर जिनके प्रियतमों का आना निश्चित था ऐसी रमणियाँ श्रृंगार करने के लिए प्रवृत्त हो गई।

भजते विदेशमधिकेन जितस्तदनुप्रवेशमथवा कुशलः ।।[39]

बलवान से जीता हुआ दुर्बल व्यक्ति दूसरे स्थान को चला जाता है अथवा चतुर व्यक्ति उसके सरण में प्रवेश करता रहता है। इस कारण चन्द्रमा प्रतिबिम्ब के छल से सुन्दर नेत्र वाली रमणियों के निर्मल कपोल वाले मुख में प्रविष्ट हो गया।

क्षममस्य बाढ़मिदमेव हि यत्प्रियसंगमेश्वनवलेपमदः।।[40]

यह शरीर प्रियतम के मिलन में आवलेप से रहित हो यही इस षरीर के लिए उचित है।

विषतां निषेवितमपक्रियया समुपैति सर्वमिति सत्यमदः।।[41]

विपरीत उपचार से प्रयोग किए गये सब पदार्थ बिसैले हो जाते हैं यह सत्य ही है क्योंकि अमृत क्षरण करने वाली भी चाँदनी आपकी विरह इसे जला रही है। करुणमपि समर्थं मानिनां मानभेदे।

रुदितमुदितमस्त्रं योशितां विग्रहेषु।।[42]

प्रणयकलह में रमणियों का करुण रोना भी मानी पुरुषों का मानभंग करने में अमोघ अस्त्र होता है।

प्रायेण नीचानपि मेदिनीभृतो जनः समेनैव पथाधिरोहति।[43]

लोग छोटे पर्वतों पर भी प्रायः समान अर्थात् सरल मार्ग से ही चढ़ते हैं किन्तु श्रीकृष्ण भगवान् की सेना ने पर्वतों के चारों ओर मार्गों को बढ़ा दिया अर्थात् चारों ओर से पर्वत पर चढ़कर उनपर अनेक मार्गों को बना दिया।

महतीमपि श्रियमवाप्य विस्मयः सुजनो न विस्मरति जातु किंचन।[44]

बड़े भारी ऐश्वर्य को पाकर भी अहंकार रहित सज्जन लोग कभी कुछ नहीं भूलते।

लज्जते न गदितः प्रियं परो वक्तुरेव भवति त्रपाधिका।[45]

दूसरे लोग प्रिय कहने पर अर्थात् किसी से प्रषंसित होने पर स्वयं लज्जित नहीं होते।

को विहन्तुमलमास्थितोदये वासरश्रियमशीतदीधितौ।[46]

सूर्य के उदय होने पर दिन की शोभा अर्थात् प्रकाश को नष्ट करने के लिए कौन समर्थ होता है। अर्थात् कोई नहीं।

उद्धृतौ भवति कस्य वा भुवः श्रीवराहमपहाय योग्यता।[47]

पृथ्वी का उद्धार करने में श्री वराह भगवान् को छोड़कर किसकी योग्यता थी अर्थात् किसी की नहीं।

वर्शुकस्य किमपः कृतोन्नतेरम्बुदस्य परिहार्यमूषरम्।[48]

पानी बरसाने वाला उन्नति को प्राप्त किया हुआ अर्थात् आकाश में छाया हुआ बादल ऊसर को क्या छोड़ देता है? अर्थात् नहीं छोड़ता।

परिवृद्धिमत्सरि मनो हि मानिनाम्।[49]

अभिमानियों का मन दूसरे की समृद्धि में मात्सर्ययुक्त होता है।

याति विकृतिमपिसंवृतिमत् किमु यन्निसर्गनिरवग्रहं मनः।[50]

जो स्वभावतः चंचल मन विकृत हो जाये इस विषय में क्या कहना है? अर्थात् स्वभावतः चंचल शिशुपाल के मन का विकृत होना कोई नयी बात नहीं है।

दयितं जनः खलुः गुणीति मन्यते।[51]

प्रियजन को गुणवान मानते हैं, अहो आश्चर्य है कि तुमने इस कृष्ण की पूजा प्रेमाधिक्य वश की है, इसके अधिक गुणी होने से नहीं।

तव कर्मणैव विकसत्यसत्यता।[52]

निन्दनीय कृष्ण की पूजा करते हुए तुम्हारे कार्य से ही तुम्हारी असत्यता प्रकट होती है।

भौमदिनमभिदधत्यथवा भृषमप्रशस्तमपि मलं जनाः।[53]

अत्यन्त अशुभ भी पृथ्वी पुत्र मंगल ग्रह को लोग मंगल कहते हैं। अतः लोगों के कहने से सत्य का निर्णय नहीं होता है।

स्फुटमापदां पदमनात्मवेदिता।[54]

अपने स्वरूप को नहीं समझना आपत्ति का स्थान होता है यह ध्रुव सत्य है।

हासकरमघटते नितरां क्षिरसीव कतमपेतमूमर्धजे।[55]

केश रहित मस्तक में कंघी के समान यह संसार में हंसी कराने वाला पूजन असंगत होता है।

न्यसनाय ससौरभस्य कस्तरुसूनस्य शिरस्यसूयति।[56]

वृक्ष के सुगन्धित पुष्प को सिर पर रखने पर कौन ईर्ष्या करता है। अर्थात् कोई भी ईर्ष्या नहीं करता।

उपकारपरः स्वभावतः सततं सर्वजनस्य सज्जनः।
असतामनिशं तथाप्यहो गुरुहृद्रोगकरी तदुन्नतिः।।[57]

सज्जन स्वभाव से ही दूसरे के उपकार करने में हमेशा तत्पर रहते हैं फिर भी उन सज्जनों की उन्नति दुर्जनों को हमेशा सन्तप्त करने वाली होता है। अहो आश्चर्य की बात है।

जितरोषरया महाधियाः सपदि क्रोधजितो लघुर्जनः।
विजितेन जितस्य दुर्मतेर्मतिमद्भिः सह का विरोधिता।।[58]

बुद्धिमान् लोग क्रोध के वेग को जीत लेते है तथा तुक्ष्य लोग क्रोध से तत्काल ही जीते जाते है। अतएव पराजित क्रोध से जीते गये बुद्धिमानों के साथ विरोध कैसा?

का च लोकानुवृत्तिः।[59]

मित्रादि का अनुरोध क्या वस्तु है? अर्थात् कुछ भी नहीं।

दानेषु स्थूललक्ष्यत्वं न हि तस्य षरासने।[60]

दान करने में ही स्थूल लक्ष्य दान देने वाले दानवीर थे। बाण चलाने में स्थूल लक्ष्य अर्थात् बड़े–बड़े निशाने को भेदने वाले नहीं थे।

शुद्धया युक्तानां वैरिवर्गस्य मध्ये भर्त्रा क्षिप्तानामेतदेवानुरूपम्।।[61]

लोगों के लिए यहीं अधोमुख होकर पृथ्वी में घूँस जाना ही उचित होता है। क्योंकि शुद्धि से युक्त अन्तःकरण वाले होने पर स्वामी के द्वारा भी शत्रु के समूह के बीच में फेंके गये अर्थात् शत्रुओं पर चलाये गये बाण के समान दुःखदायी होता है।

भवति स्फुटमागतो विपक्षान्न सपक्षोऽपि हि निर्वश्तेविधाता।[62]

शत्रु पक्ष से आया हुआ सपक्ष भी सुख देने वाला नहीं होता। जब शत्रु के यहाँ से आया हुआ अपने पक्ष वाला मित्र भी सुखप्रद नहीं होता तब बाणादि शस्त्र सुखप्रद कैसे हो सकते है। अतः श्रीकृष्ण जी के छोड़े हुए तोमर समूह का शिशुपाल के सेना को सन्तप्त करना उचित ही था।

ननु वारिधरोपरोधमुक्तः सुतरामुत्तपते पतिः प्रभाणाम्।[63]

मेघ के आवरण से मुक्त प्रभापति अत्यन्त प्रकाशित होता ही है।

इस प्रकार उपर्युक्त अनुशीलन से ज्ञात है कि माघ काव्य अनेक जीवनोपयोगी नीतिगत सूक्तियों से पूर्ण है जिनके द्वारा व्यक्ति जीवन के कल्याणकारी उद्देश्य को प्राप्त कर सकता है।

सन्दर्भ–

1– 1/29 शिशुपालवधम्
2– 1/38 शिशु0
3– 1/73 शिशु0
4– 2/10 शिशु0
5– 2/12 शिशु0
6– 2/13 शिशु0
7– 2/23 शिशु0
8– 2/27 शिशु0
9– 2/31 शिशु0
10–2/51 शिशु0
11–2/85 शिशु0
12–2/100 शिशु0
13–2/104 शिशु0
14–2/105 शिशु0
15–3/31 शिशु0
16–4/17 शिशु0
17–5/6 शिशु0
18–5/14 शिशु0
19–5/42 शिशु0
20–5/44 शिशु0
21–5/47 शिशु0
22–5/49 शिशु0
23–6/45 शिशु0
24–7/1 शिशु0
25–7/38 शिशु0
26–7/52 शिशु0
27–7/61शिशु0
28–7/68 शिशु0
29–8/7 शिशु0
30–8/22 शिशु0
31–8/24 शिशु0
32–8/54 शिशु0

33–8/55 शिशु0
34–8/60 शिशु0
35–9/5 शिशु0
36–9/12 शिशु0
37–9/23 शिशु0
38–9/43 शिशु0
39–9/48 शिशु0
40–9/51 शिशु0
41–9/68 शिशु0
42–11/35 शिशु0
43–12/46 शिशु0
44–13/68 शिशु0
45–14/2 शिशु0
46–14/8 शिशु0
47–14/14 शिशु0
48–14/46 शिशु0
49–15/1 शिशु0
50–15/11 शिशु0
51–15/14 शिशु0
52–15/16 शिशु0
53–15/17 शिशु0
54–15/22 शिशु0
55–15/35 शिशु0
56–16/20 शिशु0
57–16/22 शिशु0
58–16/26 शिशु0
59–18/64 शिशु0
60–19/99 शिशु0
61–19/119 शिशु0
62–20/29 शिशु0
63–20/40 शिशु0